विषय	हिंदी
प्रश्नपत्र सं. एवं शीर्षक	**P2: मध्यकालीन कविता -1**
इकाई सं. एवं शीर्षक	**M13: नाथ साहित्य**
इकाई टैग	**HND_P2_M13**

निर्माता समूह	
प्रधान निरीक्षक	**प्रो. गिरीश्वर मिश्र** कुलपति, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : misragirishwar@gmail.com
प्रश्नपत्र-संयोजक	**प्रो. कृष्ण कुमार सिंह** प्रोफेसर, हिंदी एवं तुलनात्मक साहित्य विभाग, साहित्य विद्यापीठ महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : kks5260@gmail.com
इकाई-लेखक	**प्रो. दीपक प्रकाश त्यागी** प्रोफेसर, हिंदी विभाग, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर ईमेल : deepak.hindi@gmail.com
इकाई समीक्षक	**प्रो. कृष्ण कुमार सिंह** प्रोफेसर, हिंदी एवं तुलनात्मक साहित्य विभाग, साहित्य विद्यापीठ महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : kks5260@gmail.com
भाषा सम्पादक	**प्रो. कृष्ण कुमार सिंह** प्रोफेसर, हिंदी एवं तुलनात्मक साहित्य विभाग, साहित्य विद्यापीठ महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : kks5260@gmail.com

पाठ का प्रारूप

1. पाठ का उद्देश्य
2. प्रस्तावना
3. नाथ शब्द का अर्थ एवं अभिप्राय
4. नाथ संप्रदाय: अर्थ परंपरा
5. नाथ साहित्य: साहित्यिक महत्व
6. निष्कर्ष

1. पाठ का उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन के उपरांत आप-

- आदिकालीन साहित्य में नाथ साहित्य की भूमिका का अध्ययन कर सकेंगे।
- नाथ साहित्य के प्रदेय को समझ सकेंगे।
- नाथ साहित्य के साहित्यिक महत्व का अनुशीलन कर सकेंगे।
- सिद्ध साहित्य से नाथ परम्परा के जुड़ाव एवं विकास को समझ सकेंगे।

2. प्रस्तावना

आदिकालीन साहित्य में नाथ संप्रदाय की भूमिका महत्वपूर्ण है। यह बात सिद्ध है कि नाथों का सिद्धों से गहरा संबंध है। सिद्धों की जो सूची मिलती है उसमें अनेक का संबंध नाथ परम्परा से है। बौद्ध किंवदंतियों में गोरखनाथ को वज्रयानी साधक माना गया है, जो बाद में शैव हो गये। सिद्ध साहित्य के अध्येता तारानाथ उनका वज्रयानी नाम अनंगवज्र बताते हैं और महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री ने रमणवज्र कहा है। महत्वपूर्ण विचारक सिल्वियाँ लेवी ने नेपाल के बौद्धों में प्रचलित एक दंतकथा का उल्लेख किया है, जिसके अनुसार गोरख के समस्त अनुयायी पहले बौद्ध थे, बाद में यवनों के भय से बौद्धधर्म छोड़कर ईश्वरवादी (शैव) हो गये। एक विद्वान ने तो असंग अथवा नागार्जुन और गोरखनाथ को एक ही मानने का प्रस्ताव किया है (मोहनसिंह-गोरखनाथ, भूमिका: दलजीत सिंह) किंतु ये किवदंतियाँ अप्रामाणिक हैं और इनके आधार पर कोई भी निष्कर्ष निकालना अवैज्ञानिक होगा, किंतु इनसे इतना तो स्पष्ट है कि बौद्ध साधना का नाथ परम्परा से घनिष्ठ संबंध है। दोहा एवं चर्यापदों में अनेक स्थानों पर सिद्धों या गुरू या वज्रसत्त्व के लिए नाथ विशेषण का प्रयोग हुआ है। 'जत वि चित्तहि विफ्फुरई तत्त वि णाह सरूअ'। अर्थात् जिसका चित्त विस्फुरित हो जाय सरहपा की दृष्टि में वह नाथस्वरूप ही है, जो मन को निश्चल कर ले 'जो णत्थु णिच्चल किअउ मण सो धम्मक्खर पास' कण्हपा की दृष्टि में वह वज्रधरनाथ ही है। इतना ही नहीं प्रज्ञोपाय-विनिश्चय-सिद्धि, साधनामाला तथा कुछ अन्य अमुद्रित सिद्ध साधना की कृतियों में नाथों की जो चर्चा है, उसके आधार पर डॉ. वड़थ्वाल का अनुमान है कि बौद्ध परंपरा में ही वज्रनाथी संप्रदाय का उद्भव हुआ होगा और वज्रनाथी साधक नाममात्र के लिए ही बौद्ध है, उनमें नाथ शब्द गुरु का पर्याय है। इसीलिए उनकी मान्यता है कि अधिकांश बौद्ध सिद्ध विचारधारा की दृष्टि से नाथपंथी है, किंतु सांप्रदायिक परंपरा के अनुसार बौद्ध हैं।

स्पष्ट है कि बौद्ध साधना पद्धति से नाथपरंपरा के जुड़ाव को लेकर दो तरह के मत हैं। एक मान्यता के अनुसार गोरखनाथ और उनका सम्प्रदाय वज्रयान की शैव शाखा है और दूसरी मान्यता के अनुसार बौद्ध सिद्ध प्रच्छन्न नाथपंथी हैं। इन दोनों ही मतों में वैज्ञानिक तर्क नहीं है, बल्कि अनुमान का आश्रय है, अतः इसे ग्रहण नहीं किया जा सकता, किंतु इतना तो स्पष्ट है कि ये दोनों ही साधना-विचार पद्धतियाँ समानान्तर चलती रहीं, इसीलिए दोनों पद्धतियों में आदान-प्रदान के स्पष्ट संकेत उपलब्ध हैं। आगे चलकर गोरखनाथ ने नाथ परंपरा को व्यवस्थित किया। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का यह कहना है कि गोरखनाथ ने योगमार्ग को एक व्यवस्थित रूप दिया। उन्होंने शैव प्रत्यभिज्ञा दर्शन के सिद्धांतों के आधार पर बहुविस्तृत कायायोग के साधनों को व्यवस्थित किया, आत्मानुभूति एवं शैव परंपरा के सामंजस्य से चक्रों की संख्या नियत की। उन दिनों अत्यंत प्रचलित वज्रयानी साधना के पारिभाषिक शब्दों के सांवृत्तिक अर्थ को बलपूर्वक पारमार्थिक रूप दिया और अब्राह्मण उद्‌गम से उद्भूत संपूर्ण ब्राह्मण विरोधी साधना मार्ग को इस प्रकार संस्कृत किया कि उसका रूढ़िविरोधी रूप ज्यों का त्यों बना रहा किंतु उसकी अशिक्षाजन्य प्रमादपूर्ण रूढ़ियाँ परिष्कृत हो गयीं।' (नाथ संप्रदाय, पृ. 98) गोरखनाथ का सबसे बड़ा अवदान यह है कि उन्होंने

वाममार्गी तांत्रिक शाक्तों एवं शैवों की लोकविरोधी तत्त्वों को अस्वीकार करते हुए लोकजीवन में शुचिता, अहिंसा और आचरण की पवित्रता जैसे श्रेष्ठ मानवीय मनोभावों को अपने संप्रदाय का लक्ष्य रखा। उन्होंने शैव दर्शन और पतंजलि के हठयोग को मिलाकर अपने संप्रदाय का वैचारिक आधार तैयार किया एवं बाह्याडंबरों का विरोध किया। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी का भी विचार है कि 'गोरखनाथ की साधना का मूलस्वर शील, संयम और शुद्धतावादी है और उन्होंने तांत्रिक उच्छृखंलताओं का विरोध कर निमर्म हथौड़े से साधु और गृहस्थ दोनों की कुरीतियों को चूर्ण कर दिया।' (नाथ संप्रदाय, पृ. 188)

3. नाथ: शब्द का अर्थ एवं अभिप्राय

'नाथ' शब्द का प्रयोग अनेक अर्थों में मिलता है। 'ऋग्वेद' के दशम मण्डल में 'नाथ' शब्द का प्रयोग सृष्टिकर्ता, ज्ञाता तथा सृष्टि के निमित्त रूप में किया गया है। 'महाभारत' में 'स्वामी' या 'पति' के अर्थ में इसका प्रयोग किया गया, किंतु बोधिचर्यावतार में बुद्ध के लिए इस शब्द का प्रयोग मिलता है, परंतु कालान्तर में जब योगपरक पाशुपत शैवमत का विकास 'नाथ संप्रदाय' के रूप में हुआ तो 'नाथ' शब्द 'शिव' के लिए प्रचलित हो गया और शिव को आदिनाथ माना जाने लगा। शक्ति संगम तंत्र के अनुसार 'ना' ब्रह्म है, जो मोक्ष प्रदान करता है तथा 'थ' 'अज्ञान' के सामथ्र्य को स्थगित करने वाला है। अतः नाथ वह तत्त्व है जो मोक्ष प्रदान करता है, ब्रह्म का अनुबोध करता है तथा अज्ञान का स्थगन करता है- 'श्री मोक्षदान-दक्षत्वात् नाथ ब्रह्मानुबोधनात्। स्थगिता ज्ञान विभवात् श्री नाथ इति गियते।' डॉ. पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल ने नाथ शब्द का प्रयोग दो अर्थों में किया है- एक रचयिता के अर्थ में, दूसरे ब्रह्म या परमतत्व के रूप में। आचार्य परशुराम चतुर्वेदी ने नाथ को ऐसे महिमान्वित महापुरुषों का बोधक स्वीकार किया है, जिन्हें देवत्व का दर्जा दिया जा सकता है।

समग्रतः स्पष्ट है कि नाथ ब्रह्म, परमतत्व या सद्गुरू है, जो सांसारिकता, अज्ञान से मुक्ति प्रदान कर मोक्ष के निमित्त ज्योतिर्मय पथ को आलोकित करता है। गोरखबानी में लिखा भी है-

> नाथ कहै तुम आपा राखौ
> नाथ कहै तुम सुनहु रे अवधू (पृ. 11)

किंतु वर्तमान में नाथ शब्द एक संप्रदाय विशेष में दीक्षित होने वाले साधकों के लिए व्यवहृत होने लगा है।

4. नाथ संप्रदाय: अर्थ, परंपरा एवं वैशिष्ट्य

भारतीय धर्म साधना में नाथ संप्रदाय के अनेक नामों का उल्लेख मिलता है, किंतु 'हठयोग प्रदीपिका' की टीका में 'नाथ संप्रदाय' नाम ही स्वीकृति है- आदिनाथः सर्वेषा नाथानां प्रथमः, ततो नाथसंप्रदायः प्रवृत्त इति नाथ- संप्रदायिनी वदन्ति। किंतु इस साधनात्मक एवं संप्रदायगत वैशिष्ट्य के आधार पर संप्रदाय के लिए सिद्धमत, सिद्ध-मार्ग, योगमार्ग योग-संप्रदाय, अवधूतमत, अवधूत-संप्रदाय आदि नाम प्रचलन में रहा है। 'गोरक्ष सिद्धांत संग्रह' में लिखा है कि हमारा मत अवधूत मत ही है और अवधूत ही गुरू हो सकता है। स्पष्ट है कि अवधूत सद्गुरू के लिए प्रयुक्त है। 'गोरखनाथ एण्ड कनफटा योगीज' ग्रंथ में जी. डब्ल्यू ब्रिक्स ने नाथ संप्रदाय के साधकों के लिए 'कनफटा' या 'गोरखनाथी' संबोधन किया है। उनका विचार है कि 'कान की लौ चिरवाने के कारण ये कनफटा कहे जाते हैं। दीक्षा के समय साधकों द्वारा कान फड़वाकर कुण्डल धारण किया जाता था। ये कुण्डल मिट्टी के या धातु के या हरिण के सींग के बनाये जाते थे।' गोरखनाथी इसलिए इन्हें कहा जाता था, क्योंकि गोरखनाथ इस संप्रदाय के संगठनकर्ता हैं।

इस संदर्भ में धर्मवीर भारती के विचार उल्लेखनीय है। उन्होंने हिंदी साहित्य कोश भाग-1 में लिखा है कि 'नाथ संप्रदाय सहजयानियों की भाँति केवल पूर्वी भारत में ही सीमित न होकर सारे देश में व्याप्त धर्मसाधना रहा है। नाथ संप्रदाय तथा उसकी शाखा-प्रशाखाएँ दूर-दूर तक फैली हुई हैं और ऐसा भी प्रतीत होता है कि इसमें और बहुत-सी छोटी-छोटी धर्मसाधनाएँ कालान्तर में विलीन होती गयी हैं। वैसे तो नाथ संप्रदाय के धर्माचार्यों में गोरखनाथ सबसे प्रभावशाली और प्रख्यात हैं, परंतु वे इस संप्रदाय के संस्थापक नहीं थे। वे पहले से चली आती हुई इस धारा के संघटनकर्ता और उन्नायक थे।' गोरखनाथ की इसी भूमिका के कारण इस संप्रदाय के लिए नाथमत, नाथपंथ या नाथ संप्रदाय शब्द प्रचलित हो गया, जो तार्किक भी है और विवेकसम्मत भी। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के विचार उल्लेखनीय है 'मत्स्येन्द्रनाथ के शिष्य गोरखनाथ या गोरखनाथ इस मत के सबसे बड़े पुरस्कर्ता थे। उनके द्वारा प्रवर्तित कहा जाने वाला बारहपंथी मार्ग नाथ संप्रदाय के नाम से प्रसिद्ध हुआ।' (साहित्यकोश, भाग-1, पृ. 330) 'दर्शन' धारण करने के कारण 'दरशनी' साधु भी कहते हैं।

जहाँ तक नाथ संप्रदाय की परंपरा का प्रश्न है, उसमें भी गोरखनाथ की भूमिका महत्वपूर्ण है, उन्होंने नाथ संप्रदाय को सांगठनिक एवं वैचारिक दृष्टि से व्यवस्थित किया एवं सुदृढ़ दार्शनिक आधार दिया। मान्यता है कि 'शिवजी के 18 संप्रदाय और गोरखनाथ के 12 संप्रदाय परस्पर कलह करते थे। गोरखनाथ ने परस्पर युद्धरत मतों को विनष्ट करके 12 पंथों में नाथ संप्रदाय को व्यवस्थित किया। ये बारह पंथ हैं- सत्यनाथी, धर्मनाथी, रामपंथ, नटेश्वरी, कन्हण, कपिलानी, वैरागी, माननाथी, आईपंथ, पागलपंथ, धजपंथ, गंगानाथी। इन्हें बारहपंथी योगी भी कहते हैं। इन बारह पंथों के अतिरिक्त 'वामराग' नामक मार्ग भी है, जिसे आधापन्थ कहते हैं, इनमें भुजके कण्ठरनाथी, पागलनाथी, रावल संप्रदाय, पंख या पंक, मारवाड़ के वन, गोपाल या राम के पंथ शिव के संप्रदाय माने जाते हैं, जबकि चाँदनाथ कपिलानी, हेठनाथ, आई पंथ चोलीनाथ, मारवाड़ का वैरागपंथ, जयपुर के पावनाथ, धजनाथ गोरखनाथ के संप्रदाय माने जाते हैं। 'हठयोग-प्रदीपिका' महत्वपूर्ण ग्रंथ है, जिसमें अनेक योगियों का उल्लेख है। इसमें आदिनाथ, मत्स्येन्द्रनाथ, सारदानन्द, भैरव चैरंगी, मीननाथ, गोरखनाथ, विरूपाक्ष, विलेशय, मन्थान भैरव, सिद्धबोध, कन्हाड़ीनाथ, कोरण्टकनाथ, सुरानन्द, सिद्धपाद, चर्पटीनाथ, काणेरीनाथ, पूज्यनाथ नित्यनाथ, निरंजनाथ, कपालिनाथ, विन्दुनाथ, काकचण्डीश्वर, भयनाथ, अक्षयनाथ, प्रभुदेव घोड़ाचूलीनाथ, टिण्टिणीनाथ, भल्लरी, नागबोध, खण्डकापालिकका का उल्लेख है। वर्णरत्नाकर में चैरासी नाथसिद्धों का उल्लेख मिलता है, जिनमें अनेक सहजयानी सिद्ध है तथा अनेक की चर्चा योगियों, निर्गुणमार्गी सिद्धों के ग्रंथों में मिलती है, फिर भी इतना तो स्पष्ट है कि सभी परम्पराओं में नौ मूलनाथ का उल्लेख है, परन्तु इनके नाम भिन्न-भिन्न परम्पराओं में भिन्न-भिन्न हैं। पं. परशुराम चतुर्वेदी के अनुसार -मीनपा (मत्स्येन्द्रनाथ), गोरखनाथ, जालंधरनाथ, चैरंगीनाथ, कानिफानाथ, चर्पटीनाथ, भर्तृहरिनाथ, कथड़िनाथ और गहनीनाथ, नवनाथ हैं। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने 'अक्षय' से लेकर 'हालिया' तक के 137 सिद्ध गुरुओं को नाथ परम्परा में स्वीकार करते हुए भी मत्स्येन्द्रनाथ, जालंधरनाथ, गोरखनाथ तथा कनिपा को स्ववर्णमान्य आचार्य के रूप में स्वीकार किया है। नागेन्द्रनाथ उपध्याय ने मत्स्येन्द्र, गोरक्ष, जालंधर, चर्पट, भर्तृहरि, रेवण, चैरंगी, गोपीचन्द, कान्हिपा, गहिनी, निवृत्ति एवं ज्ञाननाथ को प्रमुख नाथपन्थी के रूप में मान्यता दी है।

उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि आदिनाथ शिव हैं और मानव गुरुओं में मत्स्येन्द्रनाथ ही इस परम्परा के सर्वप्रथम आचार्य हैं, वे ही नाथ परम्परा के आदिगुरु हैं। इसके बाद नवनाथों में जालंधरनाथ, गोरखनाथ चर्पटीनाथ, कानिफानाथ, चैरंगीनाथ, भर्तृहरिनाथ, गोपीचंन्द गहिनीनाथ का उल्लेख अधिकांश विचारकों ने किया है।

5. नाथसाहित्य : साहित्यिक महत्व

साहित्यिक दृष्टि से नाथ परम्परा में मत्स्येन्द्रनाथ, जालन्धरनाथ, गोरखनाथ, कृष्ण पाद चैरंगीनाथ, चर्पटीनाथ, भर्तृहरिनाथ, गोपीचन्द्र नाथ, ज्ञाननाथ, एकनाथ, रतननाथ की भूमिका उल्लेखनीय है, किन्तु इसमें सर्वाधिक महत्व गोरखनाथ का ही है। क्योंकि गोरखनाथ के अतिरिक्त अन्य नाथों का अधिकांश साहित्य या तो संस्कृत में है और लोकभाषा, जिसे सधुक्कड़ी भी कहा जा सकता है, उसमें जो रचनाएं उपलब्ध हैं, उनकी प्रामाणिकता को लेकर सन्देह है, काल क्रम की भी दृष्टि से वे परवर्ती मालूम पड़ती हैं, किन्तु इस सन्दर्भ में पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल द्वारा सम्पादित 'गोरखबानी', डॉ. कल्याणी मल्लिक द्वारा मत्स्येन्द्र, भरथरी, गोपीचन्द की रचनाओं का सिद्ध सिद्धान्त पद्धति ऐण्ड अदर वक्र्स ऑव नाथ योगीज' नाम सम्पादन महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी द्वारा सम्पादित 'नाथ सिद्धों की बानियाँ', एवं नागेन्द्रनाथ उपाध्याय की पुस्तक 'गोरखनाथ' में भी कुछ पद संकलित हैं, जिसके आधार पर नाथ साहित्य के साहित्यिक मर्म को उद्घाटित किया जा सकता है।

(क) अन्तर्वस्तु - यद्यपि कि नाथों का उद्देश्य न तो अलंकार विधान, न रस निष्पति, न पदरचना का वैशिष्ट्य दिखाना है, बल्कि नाथ सम्प्रदाय की दार्शनिक, वैचारिक मान्यताओं को उद्घाटित करना उनका लक्ष्य है, इसलिए उनका साहित्य नीरस, उपदेशात्मक लगता है, फिर भी इसका काव्यगत महत्व कम है। सम्प्रदायगत निष्ठाओं के बावजूद नाथ साहित्य में तत्कालीन समय में व्याप्त अश्लीलता, मिथ्या वाद-विवाद, अनाचार, बाहयडम्बर, असंयमित जीवन पद्धति के प्रति प्रतिरोध का स्वर है। इन्होंने अनुभव को महत्व दिया। उन्होंने संयम एवं नैतिक आचरण को महत्व दिया -

हसिबा षेलिबा रहिबा रंग। काम क्रोध न करिबा संग।।
हसिबा षेलिबा गाइबा गीत। दिढ़ करि राषि आपना चीत।।
हसिबा षेलिबा धरिबा ध्यान। अहनिसि कथिबा ब्रहम गियांन।।
हसै बेलै न करै मन भंग। ते निहचल सदा नाथ के संग।।
(गोरखबानी पृष्ठ 3-4)

चित्र की दृढ़ता मूल है, इसे मनुष्य की सदैव स्मरण रखना चाहिए।

गुरु ज्ञान के लिए आवश्यक है, क्योंकि नाथ साधना के मार्ग में निगुरे की गति नहीं है-

गुरु की जै गहिला निगुरा न रहिला ।।
गुरु बिनं ग्यानं न पाईला रे भाईला ।।
(गोरखबानी, पृष्ठ 128)

गुरु का महत्व इसीलिए है क्यों कि उसके पास तत्व अधिक है। तत्व ज्ञान प्राप्ति के बाद शिष्य के लिए जरूरी नहीं कि वह पीछे-पीछे भटकता रहे-

अधिक तत्त ते गुरु बोलिये हींण तत्त तें चेला
मन मानैं तो संगि रमौ नही तो रमौ अकेला।।

(गोरखबानी, पृष्ठ 65)

योगी के लिए मन की शुद्धता. दृढ़ता, सात्विकता एवं शील आवश्यक है। तत्वज्ञान के लिए कहीं -कहीं भटकने की आवश्यकता नही है, क्योंकि संपूर्ण तीर्थ तो घट के भीतर ही है-

पंथि चलै चलि पवनां तुटै नाद बिंद अरू वाई।।
धट ही भीतरि अठसठ तीरथ कहाँ भ्रमै रे भाई।।
(गोरखबानी, पृष्ठ 55)

मिथ्या वाद - विवाद निरर्थक है, योगी को गुरु मुख की वाणी में ही जीर्ण हो जाना चाहिए, प्रत्येक प्रकार का बाह्याचार निरर्थक है, निर्मूल्य है। योगी को और मनुष्य को भी सहज जीवन व्यतीत करना चाहिए, जीवन में धैर्य आवश्यक है -

हबकि न बोलिबा ठबकि न चलिबा
धीरै धरिबा पावं।
गरबं न करिबा सहज रहिबा
भणत गोरष रावं।।
(वही, पृष्ठ 11)

योगी का आचरण ही महत्वपूर्ण है, कथनी नहीं । पवित्र वही है जो शीलवान है -

सहज सील का धरै सरीर।
सो गिरती गंगा का नीर।।
(वही, पृष्ठ 17)

योगी की साधना विकट है। इसीलिए उसकी साधना विकारों से मुक्ति की साधना है। नाथों ने विकार के भीतर से निर्विकार के साक्षात्कार को साधना का अनिवार्य अंग माना है -

नो लन पातरि आगे नाचैं पीछैं सहज अषाडा।
ऐसे मन लै जोगी षेलै तब अन्तरि बसै भंडारा।।
(वही, पृष्ठ 217)

नाथो के लिए ब्रह्मचर्यमय जीवन ही आदर्श है, इसीलिए गृहस्थाश्रम को बंधन माना गया है -

मनमुषि जाता गुरुमुषि लेहू,
लोही मास लगनि मुषि देहू
मात पिता की मेटौ धात,

ऐसा होइ बुलावै नाथ।।

अर्थात् जब तक माता - पिता का दिया हुआ धातुमय शरीर मिटा नहीं दिया जाता, तक नाथ- पद तक पहुँचाना असम्भव हैं। इसीलिए नाथ पंथ में नाद - विंदु का संयम आवश्यक है और संयम रखने वाला ही साक्षात् शिवरूप है किन्तु इसके लिए मद्य, भांग का सेवन अनुचित है -

जोगी होई पर निंदा झषै, मद मांस अरू भागि जो भषै।
इकोतर सै पुरिषा नरकहिं जाई। सति सति भाषंत श्री गोरष राई।।
(वही, पृष्ठ 56)

समग्रतः नाथों ने कठोर ब्रह्मचर्य, वाक्संयम, शारीरिक शुचिता, मानसिक दृढ़ता, ज्ञान- गुरू के प्रति निष्ठा, बाह्य आचरण के प्रति अनादर, आन्तरिक शुद्धि मद्यमांसादि के पूर्ण बहिष्कार, सहज-सरल जीवन पर बल देकर परवर्ती संत साहित्य के लिए आचरण-मन शुद्धि प्रधान पृष्ठ भूमि तैयार करके भक्ति आन्दोलन के उदय की महत्वपूर्ण पृष्ठभूमि निर्मित की।

(ख) शिल्प - जहाँ तक काव्य भाषा का प्रश्न है नाथों की भाषा पर पंजाबी, राजस्थानी, मराठी, गुजराती आदि के शब्द है, किन्तु खड़ी बोली प्रयोग की अधिकता है। वस्तुतः उनकी भाषा अपभ्रंश एवं हिंन्दी के बीच की एक कड़ी है। शैली के स्तर पर देखे तो अनेक शैलियों का प्रयोग हुआ है, किन्तु उलटवासी प्रयोग की अधिकता है इसके लिए इन्होंने संध्या भाषा का प्रयोग किया है, प्रतीकों एवं रूपकों की योजना भी विलक्षण एवं काव्यत्म से सम्पन्न है, चमत्कार प्रदर्शन उनका उद्देश्य नही था, फिर भी पूरी सहजता के साथ रूपक, उपमा, विभावना, विरोधाभास, विशेषोक्ति, असंगति, अतिशयोक्ति, अनुप्रस अलंकारों का प्रयोग मिलता है । लोक से संवाद के लिए नाथों ने अनेक लोकोक्तियों एवं मुहावरों का प्रयोग किया है।

6. निष्कर्ष

हिन्दी साहित्य के इतिहास में नाथ साहित्य का योगदान महत्वपूर्ण है एवं युगान्तरकारी भी। नाथ पंथ की सबसे बडी भूमिका यह है कि उसने स्थानीय लोक संस्कृति से संवाद स्थापित किया। उसका दृष्टिकोण सेक्युलर है। नाथ साहित्य में धार्मिक सहिष्णुता का विकास हुआ, इसीलिए बौद्धधर्म, जैन धर्म के सात्विक तत्वों के प्रति आत्मीयता का भाव है तो सनातन धर्म के प्रति भी आस्था है। यह सम्प्रदाय खुले मन से वैचारिक बहस के लिए आमंत्रित करता है। गोरखनाथ ने कहा है -

कोई वादी कोई विवादी जोगी कौं वाद न करना।
अड़साठे तीरथ समंद समानै यू जोगी को गुरुमसि जरनो।।

नाथ साहित्य का महत्वपूर्ण अवदान भक्ति आन्दोलन के विकास में दिखाई देता है। हिन्दी का निर्गुण साहित्य तो अनुभव, विचार, भाषा एवं शैली की दृष्टि से नाथ साहित्य का ऋणी है । आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने ठीक ही लिखा है कि 'कबीर आदि संतो को नाथपंथियों से जिस प्रकार साखी और बानी शब्द मिले, उसी प्रकार साखी और बानी के लिए बहुत कुछ सामग्री और सधुक्कड़ी भाषा भी।'